ISSN 2455-8729 **Chetana**
(International Educational Journal)

रामसनेही सम्प्रदाय (रेण पीठ) के सन्त साहित्य का महत्त्व

डॉ. रामकुमार सिंह
व्याख्याता, हिन्दी विभाग
राजकीय महाविद्यालय, रामगढ़ शेखावाटी सीकर
ईमेल – ramkumarsingh358 @gmail.com

==========

भक्ति आन्दोलन को मध्यकालीन भारत की महत्वपूर्ण सांस्कृतिक देन माना गया है। जिसके अनुक्रम में अनेक संतों का प्रादुर्भाव हुआ। भक्ति आन्दोलन अत्यन्त व्यापक था और इसने सम्पूर्ण उत्तरी भारत को प्रभावित किया। 15 वीं शताब्दी की जिस संक्रमणशील स्थिति ने संत मत के अग्रदूत कबीर को परम्परागत सगुण मार्गी वैष्वण धर्म से पृथक निर्गुण मत का परिवर्तन करने के लिए प्रेरित किया था, राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक सभी दृष्टियों से ठीक उसी इतिहास की पुनरावृत्ति के परिणामस्वरूप 18 वीं सदी में रामसनेही सम्प्रदाय का अविर्भाव हुआ। यह सम्प्रदाय समय की मांग का प्रतिफल था। अतः ब्राह्मणों एवं सगुणोपासक वैष्णवों के लाख विरोध करने पर भी तेजी से विकसित होता रहा और थोड़े ही समय में राजस्थान के विभिन्न भागों में ही नहीं, वरन मध्यप्रदेश, गुजरात, दिल्ली तथा देश के अन्य स्थानों पर इसकी शाखायें स्थापित हो गई। सम्प्रदाय के यशस्वी संतो ंके सात्विक जीवन एवं चरित्र से प्रभावित होकर सामान्य जनता के साथ ही अनेक राजे–महाराजे भी सम्प्रदाय में दीक्षित हो गये। 17 वीं सदी के अन्तिम चरण और 18 वीं सदी के प्रारम्भिक चरण में मारवाड़ की राजनीतिक स्थिति संकटपूर्ण थी। यह काल सामाजिक एवं धार्मिक दृष्टि से भी अपकर्ष का काल था। इस समय तक समाज में अनेक जातियाँ अस्तित्व मे आ चुकी थी। ब्राह्मण अपने अस्तित्व को बनाये रखने हेतु कर्मकाण्ड और मूर्ति पूजा का प्रचार कर रहे थे। मृत्युभोज और सती प्रथा जैसी बुराईया समाज का आवश्यक अंग बन चुकी थी। धार्मिक क्षेत्र में सगुण भक्ति नाना प्रकार के पाखण्डों और अन्धविश्वासों से जर्जर हो रही थी। दूसरी और कबीर द्वारा प्रवर्तित निर्गुण मार्गी साधना संकुचित व्यक्तिवाद पर आधारित नये–नये पंथों के दल–दल में फंसकर सत्वहीन हो

चुकी थी। ऐसी विकट परिस्थिति में संत दरियाव ने भक्ति आन्दोलन को नई दिशा प्रदान की। इन्होंने ही रामसनेही–सम्प्रदाय की स्थापना की। इन्होंने अपनी वाणियों एवं भजनों के माधुर्य रस से जनता में निर्गुण भक्ति का प्रचार किया और सगुणोपासना के क्षेत्र में बढते हुए अंधविश्वास का प्रबल युक्तियों से खण्डन किया। दरियाव जी ने जातिगत और कुलगत श्रेष्ठता की निन्दा कर समाज में व्याप्त बुंराईयों को दूर करने का महत्वपूर्ण कार्य किया। उनके शिष्य रामद्वारों में निवास करते हैं और रामसनेही कहलाते है। मारवाड़ का 'रेण' नगर इस सम्प्रदाय का प्रमुख आराधना स्थल है।

संत दरिया धार्मिक एवं सामाजिक सुधार के हितचिन्तक थे। उन्होंने कहा कि परब्रह्म 'राम' की उपासना हेतु मूर्तिपूजा, आडम्बर, व्रत, तीर्थ, माला, कंठी, तिलक और सम्प्रदाय की कोई आवश्यकता नहीं है। वे अल्लाह और ईश्वर के भेद को काल्पनिक मानते थे :–

'र' रा तो रब्ब आप हैं, 'म' मा मोहम्मद जान।

दोय हरफ के मायने, सब ही वेद पुराण।।

कंठी माला कठ की, तिलक गार का होय।

जन दरिया निज नाम बिन, पार न पहुंचे कोय।।

उनके द्वारा प्रचलित धर्म जन साधारण का धर्म था, जो उपनिषदों और पुराणों के अध्यात्मवाद से कोसो दूर था। सामाजिक चिन्तन में उन्होंने जातिभेद को मान्यता न देकर मनुष्य के व्यक्तिगत आचारण में सुधार करने पर जोर दिया। वे छुआछूत, संन्यास धारण और दुर्व्यसनों के विरोधी थे। दरिया साहब ने अन्य निर्गुणियां संतों की भांति नारी की निन्दा नहीं की।

नारी जननी जगत की पाल पोस दे पोष।

मूरख राम बिसारि कै, ताहि लगावे दोष।।

नारी आवै प्रीतिकर, सतगुरू पर से आण।

जन दरिया उपदेस दै, माय बहिन धी जाण।।

इसलिए वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भी संत दरिया साहब के विचार प्रासंगिक है।

रेण – रामसनेही सम्प्रदाय में अनेक सिद्ध एवं ख्याति प्राप्त संत महात्मा हुए और उन्होंने विभिन्न स्थानों पर रामद्वारों एवं थांभायतों की स्थापना की। स्वयं दरिया साहब के शिष्यों में बिरधभान, हंसाराम, पूरणदास, हरखाराम, सुखरामदास, हरदेव, मोतीराम, बीजैराम, नेमीचंद, श्रीचंद, लखमीचंद, खेमदास, उदैगिरी, किस्तुरांबाई आदि साधना के धनी संत थे। संत साधकों के अतिरिक्त इस सम्प्रदाय में संत–कवियों की भी लम्बी परम्परा मिलती है। इस परम्परा में काव्य–प्रतिभा के धनी अनेक कवि हुए हैं। जिन्होंने साधना के साथ–साथ, जो कुछ अनुभूत हुआ, उसे सहज और सरल वाणी में अभिव्यक्त किया।

रेण–रामसनेही सन्तों ने अपनी आध्यात्मिक साधना में अनुभूत सत्य के आधार पर ब्रह्म, जीव, जगत, माया, मोक्ष आदि पर अपने स्वतंत्र विचार अपनी वाणियों एवं भजनों के माध्यम से अपना संदेश जनमानस तक पहुँचाया। संत दरिया, सुखराम, पूरणदाय, हरखाराम, सुखरामदास, रामकरण, शिवकरण, खेताराम, सुखसारण, अंभाबाई, पदुमदास, मदाराम, साहिबराम, आत्माराम, बुधाराम, नानगदास, किशनदास, हीराबाई, प्रेमदयाल आदि ने अपनी वाणियों में ईश्वर को निर्गुण, निराकार, अमर, अजर, अखण्ड, अभेद, अचल, अगम, अविनाशी, सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक बतलाया। इन संतों ने आत्मा को ईश्वर का अंश और अमर माना। मोक्ष प्राप्ति हेतु इन संतों ने ईश्वर के नाम–स्मरण पर बल दिया।

संत दरियाव, हरखाराम, सुखराम आदि संतों की मान्यता थी कि नाम–स्मरण द्वारा ईश्वर को इसी जन्म में प्राप्त किया जा सकता है। परन्तु इसके लिए इन संतों ने गुरू से मार्ग–दर्शन प्राप्त करना आवश्यक बतलाया। इन संतों की मान्यता थी कि बिना गुरू के मुक्ति सम्भव नहीं है। गुरू–भक्ति के साथ ही इन संतों ने साधु–संगति पर भी अत्यधिक बल दिया और माया, मन तथा जगत को ईश्वर प्राप्ति में बाधक बतलाया। इन इन शिक्षाओं का फल यह हुआ कि समजा में प्रचलित कतिपय पाखण्डों को लोगों ने मानने से इन्कार कर दिया और

उनकी आस्था तर्क–संगत सिद्धान्तों पर हो गई। इस दृष्टि से इन संतों ने हिन्दु–धर्म की महान सेवा की। साथ ही, इन विचारों से समाज में एक आध्यात्मिक स्तर स्थापित हो सका तथा अशिक्षित जिज्ञासु के लिए भी शन्ति का मार्ग सुलभ हो सका। इस प्रकार अपनी आध्यात्मिक अनुभूतियों को अभिव्यंजित करने के उद्देश्य से इन संतो ंके द्वारा काव्यसृजन का कार्य भी सहज ही हो गया। इनकी साधना सहज साधना थी, इसमें पाखण्ड एवं आडम्बर नहीं था। अपने आध्यात्मिक बल तथा निष्कपट एवं प्रेमपूर्ण निश्चल आचार–व्यवहार से तत्कालीन समाज एवं राजाओं को प्रभावित करते हुए, इन्होंने लोक–हित के कार्य करने के लिए उन्हें प्रेरित भी किया। इन संतों के अध्यात्म चिन्तन और दर्शन में कोई नवीनता नहीं है परन्तु इनका महत्व इस दृष्टि से अधिक है कि इन्होंने तत्कालीन परिस्थितियों मे आध्यात्मिक और नैतिक जागरण का अलख जगाया और साधारण जनता में आध्यात्मिक और नैतिक चेतना का सूत्रपात किया।

रेण–रामसनेही संत व्यक्तिगत साधना के प्रचारक थे। इनका अध्यात्मिक दृष्टिकोण पूर्णतः व्यक्तिवादी था, किन्तु उनका व्यक्तिवाद अन्तः साधना के क्षेत्र तक ही सीमित नहीं था। अपितु व्यावहारिक जीवन में ये सार्वजनिक उत्थान के समर्थक थे। जातिगत, कुलगत तथा वैयक्तिक आचारगत श्रेष्ठता की निन्दा, मांस, मदिरा, असत्य, हिंसा आदि की भर्त्सना तथा दया, शील, प्रेम, संतोष, सत्याचरण आदि सद्गुणों की प्रतिष्ठा से सामाजिक कुरीतियों को दूर करके जन–जीवन में सुख–शान्ति की स्थापना करने में यह निरन्तर प्रयत्नशील रहे। इस काल में समाज अनेक जातियों और वर्णों में विभाजित था। धर्म का वितण्डावाद, सम्प्रदायों के मत–मतान्तर, जातियों–यतियों, परी–पैगम्बरों और तांत्रिकों का माया–जाल, ये सब इस प्रदेश में भी विद्यमान थे। धर्म तो छोटी जातियों का शोषण कर ही रहा था, जागीरदार, ठाकुर, राजा–महाराजा, सेठ–साहूकारों व अन्य उच्च वगों के हाथों छोटी जाति वालो की बुरी दशा थी। कर्मकाण्डीय ब्राह्मण धर्म के चतुर्दिक प्रहार निम्न वर्ग पर हो रहे थे। इन परिस्थितियों में रामसनेही संतों ने एक धार्मिक एवं सामाजिक क्रांति का सूत्रपात किया। इन संतों और इनके अनुयायियों ने इसे दूर–दूर तक फैलाया, साधारण समाज के आम आदमी की पीड़ा को इन

संतों ने समझा और जन मुक्ति के एक प्रखर स्वर का उद्घोष अपनी काव्य सृजना में किया। तत्कालीन समाज में जो ओर भी विकार, विषमतायें, विसंगतियां थी, उनको उजागर कर उनके परिष्कार के उपाय भी इन सन्त–कवियों ने बताये। व्यक्ति और समाज के नैतिक आचरण में जो दोष थे, व्यक्ति और समाज जिन व्यसनों, बुराइयों, और कुरीतियों का शिकार था, इन संतों ने निर्भीकता से उन प्रहार किया और एक सात्विक स्वस्थ व विशुद्ध अनुशासित जीवन जीने की उन्हें प्रेरणा दी। इन संत–कवियों की यह सामाजिक अन्तश्चेतना, उनके साधनामय जीवन, करनी और रहनी, उपदेश तथा काव्य सृजन का एक मुखर व ओजस्वी बिन्दु है।

इन संतों ने सारे मनुष्यों को एक जाति माना–मानव जाति । सभी धर्मों को एक धर्म माना– एक मानव धर्म। 'सत्य' इन संतो ंके जीवन का केन्द्र बिन्दु था। संत सुखसारण ने कहां कि –

साच बिना साहिब नहि रीझै, झूठा कीरत काहे कूं कीजै।

साचा आप तिरै जग तारै, साचा कूं जबरौ नई मारै।।

इसलिए धर्म के बाह्यचारों और कर्मकाण्डों से अलग इन संतो ंके इस 'अनुभूत सत्य' को तत्कालीन जनता ने स्वीकार किया।

रेण रामसनेही संतों ने श्रम साधना और कर्म को महत्व दिया। इन संतों ने शोषक और शासक वर्ग के विरूद्ध जनसंघर्ष और जनक्रांति की प्रेरणा नहीं दी। ये संत सामाजिक अशान्ति, कलह, संघर्ष और ध्वंस में विश्वास नहीं करते थे, उनका दर्शन शान्ति का था। कर्ममय जीवन द्वारा आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करने का उपदेश इनकी समस्त वाणि में है।

इस सम्प्रदाय के संतों ने समन्वयी भाव को अपनाया । ब्रह्म के निर्गुण निराकार स्वरूप पर दृढ़ आस्था होने पर भी इन्होंने साकार एवं निराकार की उपासना के सम्बन्ध में उदारता का परिचय दिया। इस प्रकार इन संतों ने निर्गुण–सगुण के विवाद को दूर कर इनमें समन्वय का सद्प्रयास किया। इनकी साधना का मुख्य आधार 'राम' नाम है जो सगुण और निर्गुण

दोनों प्रकार के उपासकों में मान्य है। दरिया साहब उदार प्रवृति के व्यक्ति थे, इसलिए उन्होंने सगुणोपासकों की आलोचना न कर उनके प्रति भी प्रेम दर्शाया –

किसको निन्दू किसको बन्दू, दोनूं पल्ला भारी।

निरगुण तो है पिता हमारा, सरगुण है महतारी।।

इन संतों ने हिन्दु–मुस्लमानों के बाह्याचारों का खण्डन ही नहीं किया अपितु समन्वय की उर्वरा भूमि भी तैयार की है। संत मनसाराम ने हिन्दु–मुस्लिम एकता पर बल देते हुए कहा है –

पैगम्बर अवतार सब, कह्यो नमो आदेश।

ररंकार महाराज की, महिमा करे महेश।।

अतः हिन्दु–मुस्लिम एकता और धर्मनिरपेक्षता की दिशा में इन संतों का योगदान महत्वपूर्ण रहा है।

इन संतों की सामाजिक चिन्ता के आयाम बहुत ही व्यापक रहे हैं। वेदों में जिस प्रकार ऋषि–मुनियों ने पर्यावरण रक्षा की बात कही है, उसी परम्परा में संतों ने भी पर्यावरण सरंक्षण की बात कही है। रामसनेही सम्प्रदाय की आचार संहिता में भी ऐसे कुछ नियम है जो पर्यावरण संरक्षण से सम्बन्धित है।

रेण–रामसनेही संतों ने सामाजिक चेतना के साथ–साथ सांस्कृतिक चेतना को भी जागृत किया। इन सांस्कृतिक शाश्वत मूल्यों के कारण ही यहां की सांस्कृतिक चेतना शताब्दियों तक जीवन्त रहीं, जिसकी प्रासंगिता आज भी अनुभव की जा रही है।

समाज में व्याप्त कुछ कुरीतियों के उल्लेख मात्र से सन्तुष्ट न होकर इन संतों ने उन्हें दूर करने के लिए सुधारवादी आन्दोलन के रूप में कुछ प्रयोग भी किये थे। होली के अवसर

पर गाये जाने वाले कुत्सित गीतों और कीचड़ फेंकने की कुप्रथा के स्थान पर लोक रंजक 'फुलडोल' महोत्सव के आयोजन की परम्परा इसी विचार से स्थापित की गई है।

रेण–रामसनेही संत जनता के ही कवि थे, जनता से ही निकले थे औरी अधिकतम रूप से सामान्य जनता में ही रमें तथा सामान्य जनता के कल्याणार्थ ही उन्होंने अपने विचार प्रकट किए।

समाज का एक बड़ा वर्ग, जो जीवन रक्षा व जीवन सुधार की आंकाक्षा लिए था, इन संतों से प्रभावित हुआ था और हजारों की संख्या में ये लोग इनके अनुयायी बने थे। रामसनेही सम्प्रदाय ने जनता की श्रद्धा पाई थी और जनता इससे प्रेरित होकर सत्मार्ग की ओर अग्रसर हुई थी।

रेण–रामसनेही सम्प्रदाय का वाणी–साहित्य कम महत्वपूर्ण नहीं है। इनका विशाल वाणी–साहित्य इनके रामद्वारों एवं प्रमुख पीठ–स्थानों में हस्तलिखित रूप में कप्रट पट्टिकाओं में आबद्ध मिलता है। गुणात्मक दृष्टि से भी यह साहित्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस सम्प्रदाय के वाणी–साहित्य से काव्य सौन्दर्य के पारखी चाहे अधिक संतुष्ट न हो सकें, परन्तु भावुक हृदय आकृष्ट हुए बिना नहीं रह सकता। इन संतों का भावपक्ष बहुत व्यापक एवं सशक्त है। ये भाव आमजन के हृदय की 'थाती' हैं।

इन संतों ने अपनी बात सीधी–सादी लौकिक शब्दावली में सटीक ढंग से कहीं। फिर भी लोक में प्रचलित कहावतों और मुहावरों के सहज प्रयोग से इनकी वाणियों में जन–जन को मुगध कर देने वाला नैसर्गिक सौन्दर्य विद्यमान है।

इनकी भाषा भावों को स्पष्ट करने में सक्षम है। क्योंकि इनमें भाषा का प्रमुख गुण सम्प्रेषणीयता सर्वत्र विद्यमान है। इन्होंने लगभग 260 वर्ष पूर्व, राजस्थान की जन–भाषा के भावाभिव्यंजन की शक्ति और सामर्थ्य को प्रकट किया। अन्य भाषाओं के शब्दों का प्रयोग करते

हुये इन्होंने प्रमुख रूप से राजस्थानी भाषा (मारवाड़ी) में अपने विचार व्यक्त किये। इन संतों की वाणियों में भाषागत नये प्रयोगों से राजस्थानी भाषा भी समृद्ध हुई।

रेण–रामसनेही संतों ने अपने दोह, सबद, कुण्डलियाँ आदि को देशी रागिनी के विभिन्न नामों से अभिहित किया। इन संतों के 'सबद' तथा 'पद' आदि विभिन्न राग–रागिनियों में संयोजित है। इस रूप में इन संतों का साहित्य लोक–गीत के अधिक निकट है। और शास्त्रीय–संगीत के बन्धनों से मुक्त विविध स्थानीय रागों में रचा गया है। इस दृष्टि से संगीत के क्षेत्र में भी इन संतों का यथेष्ट योगदान है।

रेण–रामसनेही संतों का काव्य दार्शनिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। संत प्रेमदयाल द्वारा रचित ग्रथ 'ग्यान विलास' में भारतीय षड्दर्शन का 24 प्रकरणों में सुन्दर एवं विशद् विवेवचन हुआ।

रेण–रामसनेही संतों की विचारधारा आज भी प्रचलित सामाजिक अन्तः विरोधों एवं समस्याओं का समाधान निकालने में एक सीमा तक सहयोग दे सकती है। आज देश की जो नैतिक, चारित्रिक सामाजिक स्थिति है, वह बहुत ही चिन्तनीय है। सत्ता, पूंजी, धर्म और राजनीति ने मिलकर देश और समाज के जीवन–मूल्यों की जो अधोगति की है, ऐसे समय में इन रामसनेही संत–कवियों का स्मरण हो रहा है। उनकी विचारधारा, उनका सामाजिक चिन्तन आज भी प्रासंगिक और उपादेय लगता है। इन संतो ंके दर्शन में जीवन की आस्था, जीवन की शक्ति, जीवन का उत्साह, जीवन की कर्मण्यता अन्तर्निहित है। काश ऐसे संतों की वाणी फिर देश के घर–घर में गूंजे, फिर ऐसे संतों का देश में अवतरण हो। 'सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय' के पवित्र संकल्प को लेकर रची गयी रेण–रामसनेही सम्प्रदाय की वाणियाँ तत्कालीन विषम वातारण में सामरस्य लाने में सफल रही थी तथा आज भी उनका महत्त्व अक्षुण्ण है।

सन्दर्भ :–

1. संतों एवं भक्तों का जीवन–चरित्र–(2005)– डॉ. विक्रम सिंह राठौड़ – राजस्थानी शोध संस्थान चौपासनी, जोधपुर।

2. मध्यकालीन राजस्थान में धार्मिक आन्दोलन (1977) – डॉ. पेमा राम – राजस्थानी ग्रन्थागार, सोजती गेट, जोधपुर।
3. रामसनेही संत काव्य– परम्परा और मूल्यांकन (2005) – डॉ. सतीश कुमार– महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश शोध–केन्द्र, मेहरानगढ़ म्यूजियम ट्रस्ट, दुर्ग, जोधपुर।
4. संत दरिया साहिब (मारवाड़ वाले) – दर्शन सिंह।
5. दरिया साहब (मारवाड़) बानी और जीवन–चरित्र : बेलवीडियर प्रिंटिंग प्रेस इलाहाबाद।
6. रामसनेही सम्प्रदाय : डॉ. राधिका प्रसाद त्रिपाठी

.

Corresponding address:
डॉ. रामकुमार सिंह
व्याख्याता, हिन्दी
राजकीय महाविद्यालय, रामगढ़ शेखावाटी (सीकर)
ईमेल – ramkumarsingh358 @gmail.com
Mob.- 9460166640